राज्य जरिये सी.बी.आई.

भ्रष्टाचार विरोधी शाखा चण्डीगढ़।

बनाम

संजीव भल्ला व अन्य

(अपराधी अपील संख्या 1338-1339/2014)

4 जुलाई, 2014

(रंजना प्रकाश देसाई और मदन बी. लोकुर जे.जे.)

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958: अभिनिर्धारित: एक व्यक्ति जो कि पी.सी. अधिनियम के प्रावधानों के तहत दोष सिद्ध किया गया है उसे धारा 360 दण्ड प्रकिया संहिता या अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के तहत अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहाई का लाभ नहीं दिया जा सकता- दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 धारा 360

अपराधिक न्यायशास्त्रः सजा- न्यायसंगत सजा- अभिनिर्धारितः सजा पुनर्वास करने वाली और मानवीय होनी चाहिए। प्रतिशोधात्मक स्वरूप की होने की आवश्यकता नहीं है न्यायाधीशों को एक दोषी को भर्त्सना या परिवीक्षा पर रिहा करने या जेल में रखने के बीच एक अच्छा संतुलन बनाना चाहिए- दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 धारा 360, 361 ।

सजा/सजा देनाः तर्क सौदेबाजी (प्ली बार्गेनिंग) अभिनिर्धारितः माना गया अपराध के पीड़ितों को न्याय देने की और दोषियों के साथ ऐसा तरीका जो उनके पुनर्वास में सहायता करता है अपना कर उन्हें न्यायसंगत सजा देने की आवश्यकता है। दण्ड प्रक्रिया संहिता 2006 में संशोधन किये गये तथा तर्क सौदेबाजी (प्ली बार्गेनिंग) पर एक अध्याय भी शामिल किया गया जो कि परीक्षण न्यायाधीश को अपराध के पीड़ित व्यक्ति को अपराधिक मामले के पारस्परिक रूप से संतोषजनक तरीके से निपटाने में सक्रिय रूप से शामिल करने हेतु सहायता करने व उसे सक्षम बनाने हेतु आयशित है। यह विचारण न्यायाधीश का कर्तव्य है कि आपराधिक मामले के निष्पक्ष व उचित समापन हेतु संसद द्वारा प्रस्तुत इन उपकरणों का उपयोग करे। सजा देते समय विचारण न्यायालय को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम तथा दण्ड प्रकिया संहिता में दिये गये परिवीक्षा के प्रावधानों पर विचार करना चाहिये जब दोषी को परीवीक्षा पर छोड़ा जाना संभव नहीं हो तो विचारण न्यायालय को उसके कारण अभिलिखित करने चाहिए।

अपराध के पीड़ित को प्रतिकर दिलाना भी समान रूप से सजा का ही एक भाग है। जब अपराध के पीड़ित को मुआवजा प्रदान करना संभव नहीं हो तो विचारण न्यायालय को इसके कारण अभिलिखित करने चाहिए। परीक्षण न्यायालय को सदैव मामले के पारस्परिक संतोषजनक निपटारे पर ध्यान देना चाहिए-प्रतिकर।

अभियोजन का मामला यह है कि बीमा कंपनी के साथ छल करने के षड़यंत्र में चार अभियुक्त व्यक्ति शामिल हुये। इनमें से एक व्यक्ति कंपनी में संभागीय प्रबंधक के रूप में पदस्थापित था तथा दो व्यक्ति प्रशासनिक अधिकारी व सर्वेयर के रूप में पदस्थापित थें। तीन व्यक्तियों ने लोक सेवक के रूप में अपने पदीय स्थिति का दुरूपयोग किया तथा चौथे व्यक्ति को उसके द्वारा पेश किये गये असत्य दावे के आधार पर भुगतान किया। विचारण न्यायालय ने प्रत्येक आरोपी को आई.पी.सी. की धारा 120 बी सपठित धारा 420 के तहत दोषी ठहराया। केवल एक आरोपी एस.पी.जी. धारा 13(1)(डी) सपठित धारा 13(2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत दोषी ठहराया गया। अभियुक्तों ने अपनी दोषसिद्धीयों को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी। एक अभियुक्त जो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत दोषी ठहराया गया था की अपील के लम्बित रहने के दौरान मृत्यु हो गयी। अभियुक्तों ने अपील को केवल सजा की मात्रा के बिन्दु तक सीमित किया। उच्च न्यायालय ने यह विचार किया कि चूंकि अभियुक्त विचारण की मानसिक पीड़ा भुगत रहे थे तथा उन्होंने दोषसिद्धी के पश्चात 20 दिन कारावास की सजा भुगत ली है अतः वे भुगती हुई सजा पर छोड़े जाने चाहिए। उच्च न्यायालय ने महसूस किया कि सजा के प्रश्न पर उदार दृष्टिकोण अपनाना चाहिए अतः निर्देश दिये कि अभियुक्तगण को धारा 120 सपठित धारा 420 भारतीय दण्ड संहिता, धारा 420 भारतीय दण्ड संहिता तथा धारा 13(1)(डी) सपठित धारा 13(2) पी.सी. एक्ट के तहत दी गयी

दोषसिद्धी कायम रहेगी हालांकि यह अभिनिर्धारित किया गया कि अभियुक्त व्यक्ति अपराध परिवीक्षा अधिनियम 1958 की धारा 4(1) के तहत सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़े जाय।

सी.बी.आई. ने अपराधी परिवीक्षा अधिनियम 1958 के तहत सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़े जाने के आदेश को चुनौती देते हुये यह कहते हुये प्रस्तुत अपीलें फाईल की कि पी.सी. एक्ट के तहत दोषसिद्धी को देखते हुये ऐसा किया जाना अनुमत नहीं है। वह अभियुक्त जो उच्च न्यायालय में अपील की सुनवायी के दौरान मर गया था उसे भी प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाया गया।

अपील खारिज करते हुये न्यायालय, श्रीमती रंजना प्रकाश देसाई जे.

अभिनिर्धारित:

1. चूंकि पी.सी. एक्ट के प्रावधानों के तहत केवल एस.पी.जी. ही दोषसिद्ध किया गया उच्च न्यायालय ने यह नहीं देखा कि सभी अभियुक्तो को पी.सी. एक्ट के तहत दोषी ठहराया गया तथा अनस्तित्व दोषसिद्धी की पुष्टि नहीं की जा सकती। सी.बी.आई. ने इस महत्वपूर्ण तथ्य पर अपना मस्तिष्क लगाये बिना ही कि अभियुक्त एस.पी.जी. के अलावा किसी भी अभियुक्त को पी.सी. एक्ट के तहत दोषी नहीं ठहराया गया है, इस बात की पीड़ा व्यक्त करते हुये कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम 1958 के तहत सदाचरण की परिवीक्षा ने उन्हें छोड़ दिया गया है इस न्यायालय में प्रस्तुत

अपील फाईल कर दी। प्रारम्भ में उच्च न्यायालय में अपील फाइल करते समय सी.बी.आई. ने एस.पी.जी. को प्रत्यर्थी पक्षकार बनाया था। असाधारण रूप से एक मृतक व्यक्ति को आपराधिक अपील में प्रत्यर्थी पक्षकार बनाया गया। अपनी गलती का अहसास होने पर इस न्यायालय में निवेदन किया गया कि एस.पी.जी. की मृत्यु उच्च न्यायालय द्वारा मामले की सुनवायी से पूर्व ही हो चुकी थी अतः अपील में सुधार हेतु कुछ समय प्रदान किया जाय। इस न्यायालय ने सी.बी.आई. को आवश्यक सुधार करने हेतु दो सप्ताह का समय प्रदान किया। तत्पश्चात पक्षकारों का संशोधित ज्ञापन फाइल किया गया था जिसमें एस.पी.जी का नाम हटा दिया गया। हालांकि अपील में (बी) द्वारा बनाये गये विधि के प्रश्न पर एक नजर डालने से यह स्पष्ट होता है कि अपराधी परीवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) के तहत सदाचरण की परीवीक्षा पर एस.पी.जी. को छोड़े जाने पर केन्द्रित थें। (1088-डी-एच;1089-ए-बी)

2. एक व्यक्ति जिसे पी.सी. एक्ट के प्रावधानों के तहत दोषसिद्ध किया गया है उसे अपराधी परिवीक्षा अधिनियम 1958 या धारा 360 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत सदाचरण की परीवीक्षा में छोड़े जाने का लाभ नहीं दिया जा सकता है। परन्तु चूंकि एस.पी.जी. मर चुका था तथा उसका नाम पक्षकारों की सारणी में से हटाया जा चुका था अतः इस हद तक अपील निष्फल हो गयी थी। उच्च न्यायालय ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि अन्य अभियुक्त पी.सी. एक्ट के तहत दोषी नहीं

ठहराये गये है तथा गलत रूप से अवधारण किया गया कि सभी को पी.सी. एक्ट के तहत दोष सिद्व किया गया है अतः इस प्रकार से उच्च न्यायालय ने केजुअल मेनर में अपील प्रस्तुत की गई। उच्च न्यायालय ने यह ध्यान नहीं दिया कि केवल एसपीजी को पीसी एक्ट के तहत अपराध में दोषी ठहराया गया है। यह अधिवक्ता का कर्तव्य था कि वह उच्च न्यायालय को सही तथ्य से अवगत करावे और यह उच्च न्यायालय की जिम्मेदारी थी कि प्रत्येक अभियुक्त की दोष सिद्वी व सजा का सही प्रकार से उल्लेख करें वह अभियुक्त की अस्तित्वहीन दोषसिद्वी की पुष्टि नहीं कर सकता। (पैरा-8) (1089-जी-एच, 1090-ए-डी)

राज्य जरिये एस.पी. न्यू दिल्ली बनाम रतनलाल अरोड़ा, ए.आई.आर. 2004 एस.सी.सी. 2364: 2004(1) सप्लीमेंट्री एस.सी.आर. (63) राज्य जरिये पुलिस इंसपेक्टर पुडुकोटई, टी.एन. बनाम ए. पार्थीबेन (2006) 11 एस.सी.सी. 473, 2006(7) सप्लीमेंटरी एस.सी.आर. पर विश्वास किया गया।

3. अभियुक्त एस.बी. तथा एम.पी.एस. धारा 120-बी सपठित धारा 420 भारतीय दण्ड संहिता तथा धारा 420 भारतीय दण्ड संहिता के तहत दोषी ठहराये गये। उन्हें कथित अपराध हेतु क्रमशः दो वर्ष व 2 1/2 वर्ष की सजा दी गयी। सारभूत सजा साथ-साथ चलने के आदेश दिये। उच्च न्यायालय द्वारा विचारण के दौरान भुगती हुई 20 दिन के कारावास की

सजा सुनाई गयी तथा विचारण के दौरान उन्होंने पीड़ा भुगती थी। उच्च न्यायालय द्वारा नरम दृष्टिकोण अपनाया गया तथा प्रत्येक द्वारा रूपये 10,000/- का व्यक्तिगत मुचलका भरे जाने पर अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) के तहत सदाचरण की परीवीक्षा पर अभियुक्तगण को छोडे जाने के आदेश दिये। अपीलार्थी का यह मामला था कि अभियुक्तगण जिस अपराध में लिप्त पाये गये थें वह गंभीर था अतः उच्च न्यायालय द्वारा उन्हें सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़े जाने के विवेकाधिकार का गलत इस्तेमाल किया गया। यह प्रस्तुतीकरण स्वीकार्य नहीं है क्योंकि अपराध 1996 में किया गया था विवादित निर्णय दिनांक 04.05.2010 का है। अभियुक्त एम.पी.एस. ने इस न्यायालय में यह शपथ पत्र फाइल किया है कि उसने परीवीक्षा की अवधि पहले ही पूरी कर ली है तथा उसके द्वारा पेश मुचलकों को विशेष न्यायाधीश ने अपने आदेश दिनांक 23.07.2012 में उन्मोचित कर दिया है। इस न्यायालय के समक्ष अभियुक्त एस.बी. के बाबत् आवश्यक विवरण नहीं है परन्तु उसकी प्रतिभूति भी अब तक उन्मोचित हो जानी चाहिए। इस मामले के विशिष्ट तथ्यों को देखते हुये किसी भी स्थिति में, समय की दूरी में सदाचरण की परीवीक्षा पर अभियुक्त को रिहा करने के आदेश को बाधित नहीं किया जाना चाहिए। (पेरा-9) (1090-ई-एच, 1091-ए-बी)

मदन बी. लोकुर. जे द्वारा

अभिनिर्धारितः

1. प्रत्येक अभियुक्त व्यक्ति को हिरासत में रखने, गिरफ्तार करने तथा कारावास में भेजे जाने की आवश्यकता नहीं है- स्वतंत्रता बहुमुल्य है तथा इसमें तब तक कमी नहीं करनी चाहिये जब तक कि ऐसा किये जाने के अच्छे कारण न हो। इसी तरह प्रत्येक वह व्यक्ति जिसने जघन्य अपराध किया है उसे फांसी पर लटकाने की आवश्यकता नहीं है हालांकि यह तीखा शोर कि उसका सिर अलग कर दो- लेकिन यह चीख अब अक्सर सुनायी दे रही है। जीवन स्वतंत्रता से ज्यादा कीमती है अतः इसे तब तक नहीं लेना चाहिये जब तक कि अन्य विकल्प बंद नहीं हो गये हो। उचित दण्ड न्याय का उतना ही पहलू है जितना कि उचित विचारण तथा प्रत्येक सजा देने वाले न्यायाधीश को यह स्वयं से पूछना चाहिए कि दी जा रही सजा क्या उचित व न्यायपूर्ण है दण्ड पुनर्वास करने वाला व मानवीय होना चाहिए अतः इसका प्रतिकारात्मक चरित्र का होना जरूरी नहीं है (पैरा 2 व 4) (1091-ई-एफ,1092-सी-)

2. हमारे आपराधिक न्यायशास्त्र का दार्शनिक आधार बदलाव के दौर से गुजर रहा है- सजा को मानवीय मिशन बनाने से लेकर सजा को निवारक और प्रतिशोधात्मक बनाने तक। यह बदलाव आज के सामाजिक संदर्भ में आवश्यक हो सकता है (हालाँकि कोई राय व्यक्त नहीं की गई है), लेकिन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और 361 और अपराधी परिवीक्षा

अधिनियम के विधायी जनादेश को देखते हुए, न्यायाधीश के लिए जो अनिवार्य है वह है यह देखा जाना है कि किसी दोषी को चेतावनी के बाद या परिवीक्षा पर रिहा करने या ऐसे दोषी को जेल में डालने के बीच अच्छा संतुलन क्या है इसका निर्णय केवल मामले-दर-मामले के आधार पर किया जा सकता है लेकिन पुनर्वास के सिद्धांत और मानवीय मिशन को नहीं भूलना चाहिए। इसके अलावा अन्य विधायी आवश्यकताएं भी हैं जिन्हें ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 5 में अपराध के पीड़ित को मुआवजे के भुगतान के लिए प्रावधान है (जैसा कि अपराधिक प्रकिया संहिता की धारा 357 में होता है)। फिर भी वर्ष 2006 में आपराधिक प्रक्रिया संहिता में पीड़ित मुआवजा योजना लागू की गयी और अपराध के पीड़ित को अतिरिक्त अधिकार प्रदान करने के लिए अतिरिक्त बदलाव लाए गए, जिसमें अपर्याप्त मुआवजा दिये जाने के खिलाफ अपील दायर करने का अधिकार भी शामिल था।(पैरा 17 व 18) (1098-सी-ई; 1099-ए-बी)

बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य (1980) 2 एस.सी.सी. 684; वेद प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य (1981) 1 एससीसी 447: 1981(1) एस.सी.आर. 1279; हरि सिंह बनाम सुखबीर सिंह (1988) 4 एससीसी 551: 1988(2) सप्लीमेंट्री एससीआर 571; कर्नाटक राज्य बनाम मुद्दप्पा (1999) 5 एससीसी 732; हरियाणा राज्य बनाम प्रेम चंद (1997) 7 एससीसी 756; हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम धर्मपाल। (2004) 9

एससीसी 681; ओम प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य (2001) 10 एससीसी 477; दलबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य (2000) 5 एससीसी 82: 2000(3) एससीआर 1000; करमजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (2009) 7 एससीसी 178 मंजप्पा बनाम कर्नाटक राज्य (2007) 6 एससीसी 231:2007 एससीआर 275 पंजाब राज्य बनाम बलविंदर सिंह (2012) 2 एससीसी 182: 2012 (1) एससीआर 45; एलिस्टर एंथोनी परेरा बनाम महाराष्ट्र राज्य (2012) 2 एससीसी 648:; 2012 (1) एससीआर 145; राज्य बनाम संजीव नंदा (2012) 8 एससीसी 450: 2012 (12) एससीआर 881; अजहर अली बनाम पिश्चम बंगाल राज्य (2013) 10 एससीसी 31: 2013(9) एससीआर 911; अंकुश शिवाजी गायकवाड़ बनाम महाराष्ट्र राज्य (2013) 6 एससीसी 770; जीतेन्द्र सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2013) 11 एससीसी 193 पर भरोसा किया।

3. कानून में यह स्थिति होने के कारण, अपराध के पीड़ितों को न्याय देने और उचित, दोषियों को उचित सजा देने के मध्य उचित संतुलन बनाने की आवश्यकता है जिससे उनके साथ ऐसा व्यवहार किया जाये कि उनके पुनर्वास में सहायता मिल सके। वर्ष 2006 में आपराधिक प्रक्रिया संहिता में लाए गए संशोधनों में प्ली बार्गेनिंग पर एक अध्याय भी शामिल है, जिसका उद्देश्य विचारण न्यायाधीश को अपराध के पीड़ित को सक्रिय रूप से शामिल करके आपराधिक मामले के पारस्परिक रूप से संतोषजनक निपटारे पर पहुंचने में सहायता करना और सक्षम बनाना है। एक विचारण

न्यायाधीश का यह कर्तव्य है कि वह किसी आपराधिक मामले की निष्पक्ष और उचित समापन सुनिश्चित करने के लिए संसद द्वारा दिए गए इन सभी उपकरणों का उपयोग करे। संक्षेप में: (ए) उचित सजा देने के लिए, विचारण न्यायाधीश को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों और दण्ड प्रक्रिया संहिता में परिवीक्षा के प्रावधानों पर विचार करना चाहिए, (बी) जब किसी दोषी को परिवीक्षा पर रिहा करना संभव नहीं है, तो विचारण न्यायाधीश को उसके कारणों को दर्ज करना होगा, (सी) किसी अपराध के पीड़ित को मुआवजा देना भी समान रूप से उचित सजा का एक हिस्सा है; (डी) जब किसी अपराध के पीड़ित को मुआवजा देना संभव नहीं है, तो विचारण न्यायाधीश को उसके कारण दर्ज करने होंगे, और (ई) विचारण न्यायाधीश को किसी मामले के पारस्परिक रूप से संतोषजनक निपटारे के वैकल्पिक तरीकों के बारे में हमेशा जागरूक रहना चाहिए।

दर्शित निर्णय विधि

श्रीमती रंजना प्रकाश देसाई जे.

2004(1) सप्लीमेंट्री एस.सी.आर. 631 भरोसा किया पेरा 8

2006(7) सप्लीमेंट्री एस.सी.आर. 35 भरोसा किया पेरा 8

मदन बी. लोकुर जे.

1980(2) एस.सी.सी. 684 भरोसा किया पेरा 2

1981(1) एस.सी.आर. 1279 भरोसा किया पेरा 3

1988(2) सप्लीमेंट्री एस.सी.आर. 571 भरोसा किया पेरा 5

(1999)5 एस.सी.सी. 732 भरोसा किया पेरा 5

(1997)7 एस.सी.सी. 756 भरोसा किया पेरा 6

(2004)9 एस.सी.सी 681 भरोसा किया पेरा 6

(2001)9 एस.सी.सी. 477 भरोसा किया पेरा 7

2000(3) एस.सी.आर. 1000 भरोसा किया पेरा 8

(2009) 7 एस.सी.सी. 178 भरोसा किया पेरा 10

2007 (7) एस.सी.आर. 275 भरोसा किया पेरा 11

2012 (1) एस.सी.आर. 45 भरोसा किया पेरा 12

2012 (1) एस.सी.आर. 145 भरोसा किया पेरा 13

2012 (12)एस.सी.आर. 881 भरोसा किया पेरा 14

2013 (9) एस.सी.आर. 911 भरोसा किया पेरा 16

(2013)6 एस.सी.सी. 770 भरोसा किया पेरा 19

(2013)11 एस.सी.सी. 193 भरोसा किया पेरा 19

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः आपराधिक अपील नम्बर 1338-39/2014

आपराधिक अपील संख्या 1230-एस.बी. एवं 1231 एस.बी आदेश 1999 में पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय चण्डीगढ़ द्वारा पारित निर्णय व आदेश दिनांक 04.05.2010 से

मुकुल गुप्ता ए.एस.जी., राजीव नंदा, टी.ए. खान, बी.वी. बलरामदास, अरविन्द कुमार शर्मा- अपीलार्थी की ओर से

अशोक के. महाजन, शीशपाल लालेर, एन.पी. मिढा, बलवीर सिंह गुप्ता- प्रत्यर्थीगण की ओर से

न्यायालय का निर्णय दिया गया द्वारा-

श्रीमती रंजना प्रकाश देसाई जे.,

1. अनुमति प्रदान की गयी।

2. पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय ने दिनांक 04.05.2010 के फैसले और आदेश द्वारा 1999 की आपराधिक अपील संख्या 1230-एसबी और 1231-एसबी नामक दो आपराधिक अपीलों का निपटारा कर दिया क्योंकि वे एक सामान्य निर्णय से उत्पन्न हुई थीं। उक्त निर्णय और आदेश वर्तमान अपीलों में लागू किया गया है।

3. इन अपीलों के निपटारे के लिए तथ्यों को बहुत विस्तार से बताना आवश्यक नहीं है। 31.05.1996 को एसपी गुप्ता, तत्कालीन डिविजनल मैनेजर, नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, होशियारपुर, आरपी चोपड़ा, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड,

होशियारपुर, संजीव भल्ला, सर्वेयर और मेजर पुरषोतम सिंह (सेवानिवृत्त) के खिलाफ एक स्रोत सूचना रिपोर्ट के आधार पर एफ.आई.आर. दर्ज की गई थी।) अन्य बातों के अलावा, एफ.आई.आर. में यह आरोप लगाया गया था कि एसपी गुप्ता ने नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, होशियारपुर में डिविजनल मैनेजर के पद पर तैनात और कार्यरत रहते हुए, आरपी चोपड़ा, सहायक प्रशासनिक अधिकारी, नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, होशियारपुर, संजीव भल्ला सर्वेयर और मेजर पुरूषोत्तम सिंह (सेवानिवृत्त)- मैसर्स किसान पोल्ट्री फार्म के मालिक, जिला कांगड़ा और कुछ अन्य अज्ञात व्यक्तियों ने एक लोक सेवक के रूप में अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग करके नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड को धोखा देने के उद्देश्य से एक आपराधिक साजिश रची। उक्त साजिश के अनुसरण में एसपी गुप्ता ने रुपये 7,02,873/- का फायर क्लेम पारित किया और झूठे दावे के आधार पर मेजर पुरषोतम सिंह (सेवानिवृत्त) को 2 लाख रुपये का आंशिक भुगतान किया और इससे नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड को आर्थिक नुकसान हुआ। एफ.आई.आर. में आगे बताया गया है कि कैसे नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड के डिवीजनल मैनेजर एसपी गुप्ता ने अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग किया और भ्रष्ट और अवैध तरीकों से अपने लिए या अपने सह-अभियुक्तों के लिए आर्थिक लाभ प्राप्त किया।

4. केंद्रीय जांच ब्यूरो (संक्षेप में, सी.बी.आई.) ने शिकायत की जांच की और जांच पूरी होने पर, (1) एसपी गुप्ता, (2) संजीव भल्ला और

(3) मेजर पुरूषोत्तम सिंह (सेवानिवृत्त) के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 420 सपठित धारा 120 बी, भारतीय दंड संहिता की धारा 420 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सपठित धारा 13(1) (डी) के तहत अपराधों के लिए (संक्षेप में, 'पीसी अधिनियम) के तहत आरोप पत्र दाखिल किये गये। सी.बी.आई. ने अपने मामले के समर्थन में 16 गवाहों से पूछताछ की। अभियुक्त ने अभियोजन मामलें से इनकार कर दिया। विशेष न्यायाधीश, सीबीआई, पटियाला ने अपने फैसले और आदेश दिनांक 30/11/1999 द्वारा प्रत्येक आरोपी को भारतीय दंड संहिता की धारा 420 सपठित धारा 120 बी के तहत दोषी ठहराया और उन्हें उक्त अपराध के लिए प्रत्येक को दो वर्ष के कठोर कारावास 2,000/- जुर्माना की सजा सुनाई। जुर्माना अदा न करने पर छह माह का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतना होगा। विशेष न्यायाधीश ने संजीव भल्ला और मेजर पुरषोतम सिंह (सेवानिवृत्त) को भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के तहत दोषी ठहराया और उन्हें प्रत्येक को 2 1/2 साल के कठोर कारावास और प्रत्येक को 3,000/- रुपये जुर्माना भरने की सजा सुनाई। जुर्माना अदा न करने पर छह माह का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतना होगा। केवल आरोपी एसपी गुप्ता को पीसी अधिनियम की धारा 13(2) सपठित धारा 13(1)(डी) के तहत दोषी ठहराया गया और 2 1/2 साल के कठोर कारावास और 1,000/- रुपये का जुर्माना भरने की सजा सुनाई गई। जुर्माना अदा न करने पर छह माह का कठोर कारावास भुगतना होगा।

5. अभियुक्तों ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय में अपील की। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में कहा कि अपील के लंबित रहने के दौरान आरोपी एसपी गुप्ता की मृत्यु हो गई थी और इसलिए, उनके खिलाफ कार्यवाही समाप्त हो गई थी। अभियुक्त के वकील ने बयान दिया कि वह अपीलकर्ताओं की दोषसिद्धि को गुण-दोष के आधार पर चुनौती नहीं देना चाहते और वह अपनी दलीलें केवल सजा की मात्रा तक ही सीमित रखते हैं।

6. उच्च न्यायालय का ध्यान इस तथ्य पर नहीं गया कि केवल अभियुक्त एसपी गुप्ता, जिनकी मृत्यु हो चुकी थी, को पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था। यह देखते हुए कि अपीलकर्ताओं की ओर से पेश वकील ने अपील को केवल सजा की मात्रा तक ही सीमित रखा था, उच्च न्यायालय ने कहा कि चूंकि आरोपी मुकदमे की मानसिक पीड़ा का सामना कर रहे थे और दोषसिद्धि के बाद मुकदमे के दौरान वे पहले ही बीस दिनों के लिए कारावास का सामना कर चुके थे, इसलिए उन्हें उनके द्वारा पहले ही भुगती जा चुकी सजा पर रिहा किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय ने कहा कि सजा के मामले में नरम रुख अपनाया जाना चाहिए और निर्देश दिया कि आरोपी के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 120 बी सपठित धारा 420ए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420 और धारा 13(1)(डी) सपठित धारा 13(2) की दोषसिद्धी को कायम रखा जाएगा। हालाँकि, उन्हें रु. 10,000/- प्रत्येक व्यक्तिगत

मुचलका और इतनी ही राशि की एक जमानत अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) के तहत पेश करने पर छोड़ दिया जायेगा। चूँकि केवल आरोपी एसपी गुप्ता को पीसी अधिनियम के प्रावधानों के तहत दोषी ठहराया गया था, उच्च न्यायालय यह नहीं देख सका कि सभी आरोपियों को पीसी अधिनियम के प्रावधानों के तहत दोषी ठहराया गया था और उक्त गैर-मौजूद दोषसिद्धि की पुष्टि नहीं की जा सकती थी।

7. सीबीआई ने, इस महत्वपूर्ण तथ्य पर अपना दिमाग लगाए बिना कि आरोपी एसपी गुप्ता को छोड़कर किसी भी आरोपी को पीसी अधिनियम के प्रावधानों के तहत दोषी नहीं ठहराया गया था, इस अदालत में त्वरित अपील दायर की, जिसमें अपराधी परिवीक्षा अधिनियम 1958 के तहत अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर उनकी रिहाई के बारे में शिकायत की गई। पीसी अधिनियम के तहत कथित दोषसिद्धि के बावजूद। प्रारंभ में उच्च न्यायालय में दायर आपराधिक अपील संख्या 1231-एसबी 1999 से उत्पन्न अपील में, सीबीआई ने एसपी गुप्ता को प्रत्यर्थी पक्षकार बनाया। एक मृत व्यक्ति को आपराधिक अपील में प्रत्यर्थी पक्षकार कैसे बनाया जा सकता है, यह इस न्यायालय द्वारा समझ में नहीं आता है। ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी गलती का एहसास होने पर, 27.01.2012 को इस न्यायालय में एक प्रस्तुतीकरण किया गया था कि एसपी गुप्ता जो विचारण न्यायालय के समक्ष आरोपी थे, उन्हें भी प्रत्यर्थीयों में से एक के रूप में शामिल किया गया था, हालांकि, यह उच्च न्यायालय के फैसले से प्रतीत

होता है उच्च न्यायालय द्वारा मामले की सुनवाई से पहले ही एसपी गुप्ता की मृत्यु हो गई थी, और इसलिए, अपील में आवश्यक सुधार करने के लिए कुछ समय दिया जाये। इस अदालत ने सीबीआई को आवश्यक सुधार करने के लिए दो सप्ताह का समय दिया। इसके बाद पक्षकारों का संशोधित ज्ञापन दाखिल किया गया जिसमें एसपी गुप्ता का नाम हटा दिया गया। हालाँकि, अपीलों में सीबीआई द्वारा अपील में बनाए गए कानूनी प्रश्न-'ए और'सी पर एक नजर डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वे अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) के तहत अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर एसपी गुप्ता की रिहाई के इर्द-गिर्द केंद्रित हैं। हम कानून के उक्त प्रश्नों को पुनः प्रस्तुत करते है।

अ. क्या भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत दंडनीय अपराधों के संबंध में अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधान लागू होते है और/या इसका लाभ दिया जा सकता है।

बी. .....

सी. क्या आक्षेपित आदेश इस माननीय न्यायालय द्वारा एआईआर 2004 एस.सी. में राज्य जरिये एस.पी. बनाम रतनलाल अरोड़ा में निर्धारित कानून के विपरीत है जहां इस माननीय न्यायालय ने माना है कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों के तहत प्रतिपादित सिद्धांतों को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत दोषसिद्धी तक विस्तृत नहीं किया जा सकता।

8. इस न्यायालय के निर्णय राज्य जरिये एसपी नई दिल्ली बनाम रतन लाल अरोड़ा का संदर्भ अपील ज्ञापन में ही यह इंगित करने के लिए पर्याप्त है कि सीबीआई की दलीलों का मुख्य मुद्दा यह है कि जिस व्यक्ति को पीसी अधिनियम के तहत दोषी ठहराया गया है, उसे अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के तहत अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहा नहीं किया जा सकता है। पीसी अधिनियम के प्रावधानों के तहत दोषी ठहराए गए लोगों को आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के तहत या अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के तहत अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहाई का लाभ नहीं दिया जा सकता है, यह कई निर्णयों द्वारा अच्छी तरह से तय किया गया है। राज्य बनाम रतन लाल अरोड़ा मामले में इस न्यायालय ने ऐसा ही कहा था राज्य प्रतिनिधित्व पुलिस निरीक्षक, पुदुकोट्टई, तमिलनाडु बनाम ए. पार्थिबन के मामले में इस न्यायालय ने इसे फिर से दोहराया है लेकिन वास्तव में हमारे लिए इसमें जाना जरूरी नहीं है क्योंकि एसपी गुप्ता की मृत्यु हो चुकी है और उनका नाम पक्षकारों की सूची से हटा दिया गया है। उस हद तक यह अपील निरर्थक हो गई है और सीबीआई के वकील भी इस पर विवाद नहीं कर सकते। हालाँकि, मैं यह जानकर नाखुश हूँ कि उच्च न्यायालय ने इस बात पर भी ध्यान नहीं दिया कि अन्य आरोपियों को पीसी अधिनियम के तहत दोषी नहीं ठहराया गया था फिर भी सभी को पीसी अधिनियम के तहत दोषी ठहराया गया था। इस प्रकार, अपील को अनौपचारिक तरीके से

उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया। उच्च न्यायालय ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि केवल एसपी गुप्ता को पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था। यह वकील का कर्तव्य था कि वह उच्च न्यायालय को सही तथ्यों से अवगत कराए और यह उच्च न्यायालय की जिम्मेदारी थी कि वह प्रत्येक अभियुक्त की दोषसिद्धि और सजा को सही ढंग से नोट करे। इससे अभियुक्त की गैर-मौजूद दोषसिद्धि की पुष्टि नहीं हो सकती थी।

9. एकमात्र चुनौती जिससे निपटना बाकी है वह यह है कि आरोपी संजीव भल्ला और आरोपी मेजर पुरूषोतम सिंह (सेवानिवृत्त) को सदाचरण की परिवीक्षा पर गलत तौर पर रिहा कर दिया गया था। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, आरोपी संजीव भल्ला और आरोपी मेजर पुरषोतम सिंह (सेवानिवृत्त) को भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के सपठित धारा 120बी और भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के दोषी ठहराया गया था। उक्त अपराध के लिए उन्हें क्रमशः दो वर्ष और 2 1/2 वर्ष की सजा सुनाई गई। मूल सजाएँ एक साथ चलाने का आदेश दिया गया। उच्च न्यायालय में मुकदमे के दौरान अभियुक्तों द्वारा काटे गए बीस दिनों के कारावास और मुकदमे की पीड़ा को सहन किया गया। उच्च न्यायालय ने नरम रुख अपनाया और आरोपियों को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) के तहत अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रुपये 10,000/- प्रत्येक के निजी बांड भरने पर रिहा कर दिया। अपीलकर्ता का

मामला यह प्रतीत होता है कि जिस अपराध में आरोपी शामिल थे वह गंभीर है और इसलिए उच्च न्यायालय ने विवेक का गलत इस्तेमाल किया और उन्हें अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहा कर दिया। मैं इस सबमिशन पर विचार करने का इच्छुक नहीं हूं क्योंकि अपराध 1996 में किया गया था। आक्षेपित निर्णय दिनांक 04.05.2010 का है। हम 2014 में हैं। आरोपी मेजर पुरूषोत्तम सिंह (सेवानिवृत्त) ने इस अदालत में हलफनामा दायर किया है जिसमें कहा गया है कि उसने पहले ही अपनी परिवीक्षा अवधि पूरी कर ली है और उसकी जमानत को विशेष न्यायाधीश, सीबीआई पटियाला ने अपने आदेश दिनांक 23.07.2012 द्वारा उन्मोचित कर दिया है। इस अदालत के पास आरोपी संजीव भल्ला के बारे में आवश्यक विवरण नहीं है लेकिन अब तक उसकी प्रतिभूति को भी उन्मोचित कर दिया गया होगा। किसी भी स्थिति में, इस मामले के विशिष्ट तथ्यों को देखते हुए, मैं अभियुक्त को अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहा करने के आदेश में खलल डालने का इच्छुक नहीं हूं। इसलिए, इस पहलू पर वकील द्वारा उद्धृत निर्णयों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है।

10. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, मुझे अपीलों में कोई मेरिट नहीं दिखती। अपीलें खारिज की जाती हैं।

मदन बी. लोकुर, जे.

1. इस बात से सहमत होते हुए कि अपीलें खारिज किए जाने योग्य हैं, मैंने सजा पर अपने विचार व्यक्त करना आवश्यक समझा, विशेष रूप से परिवीक्षा पर एक दोषी की रिहाई के संबंध में ।

2. प्रत्येक आरोपी व्यक्ति को हिरासत में लेने, गिरफ्तार करने और कैद करने की आवश्यकता नहीं है स्वतंत्रता कीमती है और इसे तब तक कम नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि ऐसा करने के लिए अच्छे कारण न हों। इसी तरह, जघन्य अपराध के लिए दोषी ठहराए गए हर व्यक्ति को फाँसी की सजा नहीं दी जानी चाहिए, भले ही उसकी चीख कितनी भी तेज क्यों न हो उसका सिर काट दो-और यह चीख अब अक्सर सुनी जा रही है। जीवन स्वतंत्रता से अधिक कीमती है और इसे तब तक नहीं लिया जाना चाहिए जब तक कि अन्य सभी विकल्प बंद न कर दिए जाएं। सिर्फ सजा सुनाना न्याय का उतना ही पहलू है जितना निष्पक्ष सुनवाई और सजा सुनाने वाले प्रत्येक न्यायाधीश से यह पूछना अच्छा होगा: क्या सजा निष्पक्ष और न्यायपूर्ण दी जा रही है

3. वेद प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य में इस न्यायालय ने पाया कि: सजा सुनाने वाले न्यायालय का कर्तव्य है कि वह ऐसे तथ्यों को इकट्ठा करने के लिए पर्याप्त रूप से सक्रिय हो जो पुनर्वास की दृष्टि से सजा पर असर डालते हों।

थोड़ी देर बाद फैसले में यह कहा गया किः

यदि बार मदद नहीं करता है, तो बेंच को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम जैसे अधिनियमों में निहित सजा देने के मानवीय मिशन को पूरा करना चाहिए।

4. दूसरे शब्दों में, इस न्यायालय का विचार था कि सजा पुनर्वासात्मक और मानवीय होनी चाहिए और इसलिए, जरूरी नहीं कि उसका स्वरूप प्रतिशोधात्मक हो।

5. इसके बाद हरिसिंह बनाम सुखबीर सिंह और अन्य में इस न्यायालय ने माना कि पहली बार अपराधियों को परिवीक्षा का लाभ देना आम तौर पर अनुचित नहीं है। मानवीय सिद्धांत को कर्नाटक राज्य बनाम मुद्दप्पा के मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के भाग ।। के तहत दोषसिद्धी तक भी बढ़ाया गया था। जिस मामले में दोषी को परिवीक्षा पर रिहाई का लाभ दिया गया था।

6. अपराधी परीवीक्षा अधिनियम (21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों के कारावास पर प्रतिबंध के सम्बन्ध में) की धारा 6 के प्रावधानों का लाभ बलात्कार के प्रयास के दोषी व्यक्तियों तक बढ़ाया गया था। यह हरियाणा राज्य बनाम प्रेम चंद (1997) 7 एससीसी 756 में था, जिसके बाद हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम धर्म पाल (2004) 9 एससीसी 681 में भी हुआ था।

7. इसी प्रकार, ओम प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य (2001) 10 एससीसी 477 में, पहली बार अपराध करने वाले दोषियों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और धारा 361 का लाभ दिया गया था और यह माना गया था कि इस तरह के लाभ से इनकार करने के कारण दर्ज किये जाने चाहिए। इस मामले में अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 323 और धारा 325 के साथ धारा 148 और धारा 149 के तहत दंडनीय था।

8. इस बीच हालांकि, दलबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य में इस न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 279 और धारा 304 ए के तहत दंडनीय अपराध के दोषी अपीलकर्ता को भारत में सड़क दुर्घटनाओं की बढ़ती प्रवृत्ति तथा पीड़ितों और उनके परिवारों पर पड़ने वाले विनाशकारी परिणाम को ध्यान में रखते हुए अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 का लाभ देने से इनकार कर दिया और यह माना गया कि-

(सी) आपराधिक अदालतें भारतीय दंड संहिता की धारा 304 ए के तहत अपराध की प्रकृति को पीओ अधिनियम की धारा 4 के उदार प्रावधानों को आकर्षित करने वाला नहीं मान सकती हैं। तेजी से या लापरवाही से वाहन चलाने से हुई मौत के अपराध के लिए दी जाने वाली सजा की मात्रा पर विचार करते समय, प्रमुख विचारों में से एक निवारण होना चाहिए।

9. इस फैसले में, जिसमें एक साइकिल चालक की मौत हो गयी थी, ऊपर उल्लिखित दो धाराओं के उल्लंघन के लिए क्रमशः तीन महीने और एक साल की सजा हुई। यह निर्णय, एक तरह से, एक दोषी को परिवीक्षा पर रिहा करने के प्रावधानों को इस न्यायालय द्वारा सख्त रूप से लागू करने का अग्रदूत था और इस न्यायालय के पहले के निर्णयों के विपरीत था।

10. करमजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (2009) 7 एस.सी.सी. 175 में दोषी जो पहली बार अपराधी था, को अपराध की गंभीरता और पीड़ित को बड़ी संख्या में चोटें लगने के कारण परिवीक्षा पर रिहाई के लाभ से वंचित कर दिया गया था। इस मामले में दोषसिद्धि भारतीय दंड संहिता की धारा 307 और शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत दंडनीय अपराध के लिए थी। इस निर्णय में निम्नलिखित प्रभाव वाली एक अनजाने में हुई त्रुटि शामिल हैः-

मंजप्पा बनाम कर्नाटक राज्य (2007) 6 एस.सी.सी. 23 में इस न्यायालय ने ओम प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य में इस न्यायालय के पहले के फैसले पर पुनर्विचार करते हुए आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के प्रावधानों के तहत या अपराधी परिवीक्षा अधिनियम,1958 के प्रावधानों के तहत राहत देने की गुंजाइश पर विचार किया और माना कि ऐसा राहत दी जानी चाहिए जहां अपराध बहुत गंभीर प्रकृति का नहीं था और ऐसे

मामलों में जहां दुराश्य अनुपस्थित रहता हो जैसे कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ए के साथ पढ़ी गई धारा 279 के तहत लापरवाही से गाड़ी चलाने का मामला।

11. जैसा कि ऊपर देखा गया है, ओम प्रकाश भारतीय दंड संहिता की धारा 323 और धारा 325 धारा 148 और धारा 149 के तहत दंडनीय अपराध से संबंधित है। मंजप्पा भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 325 और 504 के तहत दंडनीय अपराधों से संबंधित है। भारतीय दंड संहिता की धारा 279 या धारा 304ए के तहत दंडनीय किसी भी अपराध का कोई संदर्भ नहीं है। हालाँकि, ऐसा प्रतीत होता है कि यह न्यायालय यह बताना चाहता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 279 और धारा 304ए के तहत दंडनीय अपराध एक् दुर्घटना का परिणाम है और इसलिए, गंभीर नहीं है क्योंकि इसमें आपराधिक मनःस्थिति का अभाव है।

12. इसके बावजूद पंजाब राज्य बनाम बलविंदर सिंह और अन्य (2012) 2 एस.सी.सी. 182 यह फिर से माना गया कि ऐसी घटनाओं की आवृत्ति को देखते हुए, उतावलेपन या लापरवाही से गाड़ी चलाने से हुई मौत की सजा निवारक होनी चाहिए। इस मामले में दुर्घटना में पांच लोगों की मौत हो गई और छह महीने के कठोर कारावास और 5,000/- रुपये जुर्माने की सजा हुई।

13. एलिस्टर एंथोनी परेरा बनाम महाराष्ट्र राज्य (2012) 2 एस.सी.सी. 648 में दोषी की गाड़ी चलाने से सात लोगों की मौत हो गई और आठ अन्य घायल हो गए। इस न्यायालय ने धारा 304 के भाग II व धारा 338 व 337 भारतीय दण्ड संहिता के तहत दंडनीय अपराधों के लिए उच्च न्यायालय द्वारा उनकी दोषसिद्धी को बरकरार रखा। तथा उसे तीन साल के कठोर कारावास और 5 लाख. रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई। इस न्यायालय ने यह भी पाया कि यह मामला दोषी को परिवीक्षा पर रिहा करने के लिए उपयुक्त नहीं है। यह भी देखा गया कि हमारे देश में सड़क दुर्घटनाओं में सबसे अधिक मौतें दर्ज होती है और अब समय आ गया है कि कानून निर्माता भारतीय दंड संहिता की धारा 304 ए में परिलक्षित सजा नीति पर फिर से विचार करें।

14. राज्य बनाम संजीव नंदा (2012) 8 एस.सी.सी. 450 में दोषी की गाड़ी चलाने के परिणामस्वरूप छह लोगों की मौत हो गई और एक घायल हो गया। विचारण न्यायालय ने उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया और पांच साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई। अपील पर, उच्च न्यायालय ने दोषी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 ए के तहत दंडनीय अपराध करने का दोषी पाया और सजा को घटाकर दो साल कर दिया। जब तक राज्य द्वारा दायर अपील को निपटान के लिए निस्तारण हेतु रखा गया, तब तक दोषी ने कारावास की अपनी अवधि पूरी कर ली थी। ऐसा होने पर,

भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के तहत दोषसिद्धि को बहाल करते हुए, इस न्यायालय ने दी गई सजा को बढ़ाना उचित नहीं समझा। इसके लिए कई कारण बताए गए, जिनमें यह तथ्य भी शामिल था कि दोषी ने प्रत्येक मृतकों के परिवारों को प्रत्येक दस लाख रुपये और घायलों के परिवार को रु. पांच लाख. का मुआवजा दिया गया। दोषी को अन्य हिट एंड रन मामलों के पीड़ितों को 50 लाख रूपये की मुआवजा राशि केन्द्र सरकार के पास जमा कराने तथा दो साल तक सामुदायिक सेवा करने के आदेश दिये गये।

15. ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर, जल्दबाजी या लापरवाही से किए गए कार्य से मृत्यु कारित करना भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के भाग II के तहत दंडनीय अपराध हो सकता है, अतः परिवीक्षा के तहत दोषी की रिहाई नहीं की जानी चाहिए। ऐसी स्थितियाँ भी हो सकती हैं जहाँ किसी दुर्घटना में भारतीय दंड संहिता की धारा 304 ए के तहत अपराध दंडनीय हो जहाँ दुराशय अनुपस्थित हो और ऐसे मामले में किसी दोषी को परिवीक्षा पर रिहा करने से इंकार करना बहुत कठोर दृष्टिकोण हो सकता है। कानून का ऐसा पूर्ण सिद्धांत निर्धारित नहीं किया जा सकता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304 ए के तहत आने वाले किसी भी मामले में दोषी को परिवीक्षा पर रिहा नहीं किया जाना चाहिए। इसका मतलब निश्चित रूप से यह नहीं है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304 ए के तहत आने वाले सभी मामलों में, दोषी को परिवीक्षा पर

रिहा किया जाना चाहिए-यह केवल इसलिये कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और 361 में निर्धारित सिद्धांतों और अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों की अवहेलना नहीं की जानी चाहिए बल्कि इसका पालन किया जाना चाहिए और प्रत्येक मामले में मामले के तथ्यों के आधार पर उचित निर्णय लिया जाना चाहिए।

16. अजहर अली बनाम. पश्चिम बंगाल राज्य (2013) 10 एस.सी.सी. 31 में अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के तहत दंडनीय एक महिला की गरिमा को ठेस पहुंचाने के अपराध का दोषी ठहराया गया था। इसे एक जघन्य अपराध माना गया और समाज में प्रचलित सामाजिक स्थिति के साथ, एक महिला की लज्जा की दृढ़ता से रक्षा की जानी चाहिए और इसलिए अपराधी परिवीक्षा अधिनियम का लाभ उसे नहीं दिया गया। इसकी तुलना प्रेम चंद और उसके बाद धरम पाल से की जा सकती है, जहां दोषी बलात्कार के प्रयास जैसे कहीं अधिक गंभीर अपराध का दोषी था और फिर भी उसे अपराध की प्रकृति के बावजूद, और केवल उसकी उम्र के कारण अपराधी परिवीक्षा अधिनियम का लाभ दिया गया था।

17. इन निर्णयों से संकेत मिलता है कि हमारे आपराधिक न्यायशास्त्र का दार्शनिक आधार बदलाव के दौर से गुजर रहा है-सजा को मानवीय मिशन बनाने से लेकर सजा को निवारक और प्रतिशोधात्मक बनाने तक।

यह बदलाव आज के सामाजिक संदर्भ में आवश्यक हो सकता है (हालाँकि कोई राय व्यक्त नहीं की गई है, लेकिन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और 361 और अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के विधायी जनादेश को देखते हुए, न्यायाधीश के लिए जो अनिवार्य है वह है यह देखा जाना है कि किसी दोषी को चेतावनी के बाद या परिवीक्षा पर रिहा करने या ऐसे दोषी को जेल में डालने के बीच अच्छा संतुलन क्या है, इसका निर्णय केवल मामले-दर-मामले के आधार पर किया जा सकता है लेकिन पुनर्वास के सिद्धांत और मानवीय मिशन को नहीं भूलना चाहिए।

18. इसके अलावा अन्य विधायी आवश्यकताएं भी हैं जिन्हें ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 5 में अपराध के पीड़ित को मुआवजे के भुगतान के लिए प्रावधान है (जैसा कि अपराधिक प्रकिया संहिता की धारा 357 में होता है)। फिर भी वर्ष 2006 में आपराधिक प्रक्रिया संहिता में पीड़ित मुआवजा योजना और अपराध के पीड़ित को अतिरिक्त अधिकार प्रदान करने के लिए अतिरिक्त बदलाव लाए गए, जिसमें अपर्याप्त मुआवजे दिये जाने के खिलाफ अपील दायर करने का अधिकार भी शामिल था। न्यायालयों ने कितनी बार इन प्रावधानों का उपयोग किया है

19. अंकुश शिवाजी गायकवाड़ बनाम. महाराष्ट्र राज्य और जीतेन्द्र सिंह उर्फ बब्बू सिंह एवं अन्य बनाम यूपी राज्य के मामले में अंकुश

शिवाजी गायकवाड़ वाले मामले से लिए गए निम्नलिखित शब्दों में, इस न्यायालय ने माना कि किसी अपराध के पीड़ित को मुआवजा देने पर विचार करना अनिवार्य हैः-

जहां किसी विशेष मामले में मुआवजा देना या अस्वीकार करना अदालत के विवेक के अंतर्गत हो सकता है, लेकिन हर आपराधिक मामले में ऐसे प्रश्न पर अपना दिमाग लगाना अदालत का अनिवार्य कर्तव्य है। फिर ऐसे प्रश्न पर दिमाग लगाने का सबसे अच्छा तरीका मुआवजा देने या अस्वीकार करने के कारणों को दर्ज करके किया जाता है।

20. कानून में यह स्थिति होने के कारण, अपराध के पीड़ितों को न्याय देने और दोषियों को उचित सजा देने के मध्य उचित संतुलन बनाने की आवश्यकता है जिससे उनके साथ ऐसा व्यवहार हो जिससे उनके पुनर्वास में सहायता मिल सके। वर्ष 2006 में आपराधिक प्रक्रिया संहिता में लाए गए संशोधनों में प्ली बार्गेनिंग पर एक अध्याय भी शामिल है, जिसका उद्देश्य विचारण न्यायाधीश को अपराध के पीड़ित को सक्रिय रूप से शामिल करके आपराधिक मामले के पारस्परिक रूप से संतोषजनक निपटारे पर पहुंचने में सहायता करना और सक्षम बनाना है। एक विचारण न्यायाधीश का यह कर्तव्य है कि वह किसी आपराधिक मामले के निष्पक्ष और उचित समापन सुनिश्चित करने के लिए संसद द्वारा दिए गए इन सभी उपकरणों का उपयोग करे।

21. संक्षेप मेः-

(ए) उचित सजा देने के लिए, विचारण न्यायाधीश को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों और दण्ड प्रक्रिया संहिता में परिवीक्षा के प्रावधानों पर विचार करना चाहिए

(बी) जब किसी दोषी को परिवीक्षा पर रिहा करना संभव नहीं है, तो विचारण न्यायाधीश को उसके कारणों को दर्ज करना चाहिए।

(सी) किसी अपराध के पीड़ित को मुआवजा देना भी समान रूप से उचित सजा देने का ही एक हिस्सा है।

(डी) जब किसी अपराध के पीड़ित को मुआवजा देना संभव नहीं हो तो विचारण न्यायाधीश को उसके कारण दर्ज करने चाहिए, और

(ई) विचारण न्यायाधीश को किसी मामले के पारस्परिक रूप से संतोषजनक निपटारे के वैकल्पिक तरीकों के बारे में हमेशा जागरूक रहना चाहिए।

22. अपीलें खारिज की जाती हैं।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सुकेश कुमार जैन, (यू.आई.डी. नम्बर आर.जे. 0343), सदस्य, राजस्थान कर बोर्ड, अजमेर (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।